E-Learning material prepared by Dr. Dhananjay Vasudeo Dwivedi, Assistant Professor, Department of Sanskrit, Dr. Shyama Prasad Mukherjee University, Ranchi

निरुक्त की विषय वस्तु

डा० धनञ्जय वासुदेव द्विवेदी

सहायक प्रोफेसर, संस्कृत विभाग,

डा० श्यामा प्रसाद मुखर्जी विश्वविद्यालय, राँची

निरुक्त-शास्त्र का अभ्युदय वैदिक देवविद्या के सहायक के रूप में हुआ था। प्रारम्भिक काल में वैदिक देवताओं के स्वरूप को स्पष्ट करने के लिए उनके नाम-पदों का निर्वचन किया जाता था। ब्राह्मणों में इन्द्र का इन्ध से, अग्नि का अग्रि से सम्बन्ध बतलाना इसके निदर्शन हैं। यास्क के निरुक्त में तथा संस्कृत साहित्य में अन्यत्र भी शाकपूणि के निरुक्त को बहुत महत्त्व दिया गया है। शाकपूणि के ग्रन्थ में देवविद्या को प्रधानता दी गई थी तथा निर्वचन उसके अंग के रूप में ही प्रयुक्त था, इसका पता यास्क के निरुक्त से चलता है।

निरुक्तशास्त्र में देवविद्या की प्रधानता की पुष्टि यास्क के एक वचन से भी होती है-"उनसे पहले के बहुत से नैरुक्तों ने अपने निघण्टुओं में देवताओं के पर्याय शब्दों और विशेषण (गुणाभिधान)-शब्दों का भी संकलन किया था। फलतः उनकी संख्या अधिक होने से उन निघण्टुओं का आकार बहुत बड़ा हो जाता था।

कालान्तर में निरुक्तशास्त्र की वेदार्थज्ञान में उपयोगिता जैसे-जैसे विदित होती गई, इसके भाषाशास्त्रीय स्वरूप को महत्त्व मिलता चला गया। देवविद्या के सन्दर्भ में भी निर्वचन का महत्त्व अक्षुण्ण ही बना रहा। यही कारण है कि इस शास्त्र के चरम विकास की स्थिति के ग्रन्थ (यास्क के निरुक्त) में भी ग्रन्थ का आधा भाग देवविद्या को ही समर्पित है, जबकि शेष आधे भाग में निर्वचन से सम्बन्धित प्रधान-गौण प्रश्न तथा अन्य चर्चाएं एवं निर्वचन प्रतिपादित हैं।

यास्क के निरुक्त की प्रधान उपयोगिता निर्वचन के द्वारा वेदार्थज्ञान कराना है। वैदिक शब्दों का अर्थनिर्धारण किए बिना यह कार्य नहीं हो सकता। अतः वैदिक शब्दों का अर्थनिर्धारण करना निर्वचन का प्रधान लक्ष्य है। इस लक्ष्य की सिद्धि के लिए यास्क ने सबसे पहले तीन काण्डों तथा पाँच

अध्याय वाले निघण्टु ग्रन्थ का प्रणयन किया। यह ग्रन्थ उनके शास्त्र का बीज है तथा निरुक्त ग्रन्थ के रूप में उसका भाष्य उस बीज का पल्लवन पुष्पण है।

इस विवरण से यह निष्कर्ष निकलता है कि प्रकृत निरुक्त ग्रन्थ के दो विषय हैं-१. मन्त्रार्थज्ञान, २. देवविद्या। तीसरा निर्वचन इन दोनों का साधन है, अतः वह निरुक्त का प्रधान विषय है।

१. मन्त्रार्थज्ञान- अपने निघण्टु में संकलित शब्दों के निर्वचन के प्रसंग में यास्क ने वे मन्त्र या मन्त्रांश उद्धृत किए हैं, जिनमें उन शब्दों का प्रयोग उनके द्वारा निर्वचन से निर्धारित अर्थ में हुआ है। बहुधा वे अपने बात की पुष्टि या विषय की और अधिक स्पष्टता के लिए कई-कई मन्त्र या मन्त्रांश भी उद्धृत कर देते हैं। सारे निरुक्त में इस प्रकार लगभग ८०० मन्त्र या मन्त्रांश विभिन्न संहिताओं से किये गए हैं। मन्त्रार्थ करने में वे प्रायः या तो कठिन शब्दों के लौकिक पर्याय देते हैं या उन शब्दों का निर्वचन करके उनका अर्थ निर्धारित करते हैं। अपेक्षित होने पर मन्त्रार्थज्ञान के लिए सहायक इतिहास या अन्य किसी प्राचीन मान्यता अथवा प्रथा को भी वे देते हैं। मन्त्रार्थ में, या मन्त्रगत शब्द के स्वरूप के बारे में, या उसके निर्वचन पर मतभेद होने की स्थिति में, वे या तो उस मतभेद को प्रस्तुत भर करते हैं, या उसकी भलीभाँति समीक्षा करके तत्त्वनिर्णय करते हैं।

मन्त्रों के व्याख्यान में यदि दृष्टिभेद से अर्थभेद होता हो, तो वे उन दृष्टियों से भी मन्त्रार्थ करते हैं। इन दृष्टियों से वेदार्थ करने की भी उन्होंने उपेक्षा नहीं की है। निरुक्त में कुल लगभग ४४० मन्त्रों या मन्त्रांशों की इस प्रकार सङ्क्षिप्त व्याख्या की गई है। आवश्यकता न होने पर वे मन्त्र को निगदव्याख्यात या 'इत्यपि निगमो भवति' मात्र कह कर छोड़ भी देते हैं।

२. देवविद्या- देवविद्या के प्रकरण को यास्क ने दो भागों में बाँटा है। प्रथम भाग में उन्होंने देवविद्या के आधारभूत सिद्धान्तों की चर्चा सातवें अध्याय के पहले १३ खण्डों में की है। दूसरे भाग में देवताण्ड में संकलित देवताओं का स्वरूप-निरूपण ७वें अध्याय के शेष अंश से लेकर १२वें अध्याय के अन्त तक किया गया है। देवता के नाम के निर्वाचन में यास्क ने देवता के अधियज्ञिय, आधिदैविक तथा आधिभौतिक रूप को अपने सामने रखा है। जैसे अग्नि शब्द के ५ निर्वाचन किए गए हैं-१. अग्रणीर्भवति, २. अग्रं यज्ञेषु प्रणीयते- ये दो निर्वचन यज्ञ में अग्नि के महत्त्व तथा उसके आधिदैवत स्वरूप को प्रकट करते हैं, ३. अंग नयति सन्नममानः, ४. अक्नोपनो भवतीति स्थौलाष्ठीविः- ये दो

निर्वचन अग्नि के भौतिक स्वरूप को प्रकट करते हैं, ५. शाकपूणि के निर्वचन में अग्नि का आधिदैवत स्वरूप प्रकाशित किया गया है। देव शब्द के चार निर्वचन भी इसी प्रकार की विशिष्टता को दृष्टि में रखकर किए गए हैं। यास्क के मत में देवता कोई अलौकिक वस्तु नहीं, अपितु प्रत्यक्ष दिखलाई देने वाले अग्नि, वायु, सूर्य आदि पदार्थ ही हैं। ये सब देवता उनके मत में एक आत्मा की ही विभिन्न विभूतियाँ हैं। उनके ये अग्नि, इन्द्र आदि विभिन्न नाम उनके अलग-अलग कर्म के कारण पड़े हैं।

३. निर्वचन-

निर्वचन के लिए अपेक्षित सिद्धान्तों को स्पष्ट करने के लिए उन्होंने निरुक्त के प्रारम्भ के पूरे प्रथम अध्याय में उपोद्घात तथा दूसरे अध्याय के कुल २८ खण्डों में से ४ खण्डों में निर्वचन के सिद्धान्त एवं निर्वचन-शास्त्र के अधिकारी आदि की चर्चा की है। प्रथम (उपोद्घात) अध्याय में उन्होंने निर्वचनीय पदों का वर्गीकरण उनके लक्षण तथा उनसे सम्बद्ध अन्य बातें दी हैं। इन अन्य बातों में दो बहुत महत्त्वपूर्ण विवाद भी उन्होंने पूर्वपक्ष और उत्तरपक्ष के रूप में दिये हैं। ये विवाद हैं: १. नामपद आख्यात हैं कि नहीं? २. मन्त्र अनर्थक हैं या सार्थक? व्यस्तक्रम में निरुक्ताध्ययन के प्रयोजन भी इसी अध्याय में दिये गये हैं। निघण्टु के तीन काण्डों के लक्षण भी यहीं दिये गये हैं।

निर्वचन के सिद्धान्तों में यास्क ने केवल भाषाशास्त्रीय सिद्धान्त ही दूसरे अध्याय के आदि में दिये हैं। इसके बाद दूसरे अध्याय के पाँचवें खण्ड से उन्होंने निघण्टु के शब्दों की यथाक्रम व्याख्या करनी प्रारम्भ की है। सबसे पहले उन्होंने निरुक्त २.१५ से लेकर समूचे तीसरे अध्याय तक निघण्टु के नैघण्टुक काण्ड के खण्डसूत्रों में संकलित पर्याय शब्दों के प्रधान शब्दों की व्याख्या उनका निर्वचन तथा उसकी पुष्टि में मन्त्र उद्धृत करके की है। इस प्रकरण में यास्क ने प्रायः सरल शब्दों की व्याख्या की है। उसमें भी उन्होंने नैघण्टुक काण्ड के सब शब्दों की व्याख्या नहीं की है। निरुक्त के ४-६ अध्यायों में यास्क ने निघण्टु के नैगम (अथवा ऐकपदिक) काण्ड के प्रत्येक शब्द की व्याख्या की है। इस प्रकरण में दो प्रकार के शब्द आए हैं-

१. अनेकार्थक शब्द तथा २. अनवगतसंस्कार शब्द। इन शब्दों के इस चरित्र के कारण ये शब्द कठिन हो गये हैं, अतः इनमें से प्रत्येक की व्याख्या करना समुचित ही है। यास्क ने इस काण्ड के शब्दों का

विभाजन उपर्युक्त दो वर्गों में तो किया, किन्तु इनका संकलन तथा व्याख्यान दोनों प्रकार के शब्दों को अपने-अपने वर्ग में न रखकर इकट्ठे मिला-जुला रख कर ही किया है।

एकार्थक पर्याय-शब्दों के निर्वचन के प्रसंग में यास्क सबसे पहले निघण्टु के खण्डसूत्र के अर्थाभिधायक का, फिर खण्डसूत्रगत पर्यायों में विशेष व्याख्यापेक्षी शब्द का निर्वचन देते हैं। जैसे निघण्टु में आठ दिशावाचक शब्द संकलित हैं। यास्क सबसे पहले दिशा का निर्वचन करते हैं, फिर आठ शब्दों में से अन्यतम काष्ठा का।

निर्वचन करते समय यास्क स्वयं को निघण्टु के शब्दों तक ही सीमित नहीं रखते। प्रसंग प्राप्त होने पर वे अन्य शब्दों का भी निर्वचन करके मन्त्र के उद्धरण से उसकी पुष्टि करते चलते हैं। निघण्टुपठित शब्द के निर्वचन में आए पर्याय आदि प्रासंगिक शब्दों तथा निघण्टुगत शब्द पर उद्धृत मन्त्र में श्रुत और निघण्टु में असंकलित कठिन शब्दों और उन शब्दों की व्याख्या में आए शब्दों एवम् अन्यथा मिलते-जुलते शब्दों का भी निर्वचन कर देते हैं, शब्दों के निर्वचनों में पहले वे उनका वेद में प्रचलित अर्थ देते हैं, फिर यदि उन शब्दों का प्रयोग लोक में भी होता है, तो उसके लौकिक अर्थ की परीक्षा भी निर्वचन करके या उसकी कोई उत्पत्ति देकर करते हैं।

यास्क किसी भी शब्द का निर्वचन करते समय उसके अर्थ के विभिन्न पहलुओं को दृष्टि में रख लेते हैं। संस्कृत में एक शब्द के अनेक अर्थ बहुतायत से होते हैं। यास्क उन अनेक अर्थों वाले शब्दों के प्रत्येक अर्थ को स्पष्ट करने वाला निर्वचन अलग-अलग करते हैं। एक अर्थ में प्रसिद्ध शब्द के पीछे भी उनके बारे में लोगों की धारणाएँ भिन्न-भिन्न हो सकती हैं। वे उन धारणाओं को अलग-अलग निर्वचन से प्रकट करते हैं।

दुर्ग का कथन है कि शब्द के तत्त्व (वास्तविक अर्थ) को पर्यायवाची शब्द देकर, शब्द तथा पर्याय शब्द दोनों की व्युत्पत्ति देकर, फिर मन्त्र उद्धृत करके उसके आधार पर निर्णय करके यास्क ने ऐकपदिक काण्ड के शब्दों का निर्वचन किया है-

तत्त्वं पर्यायशब्देन व्युत्पत्तिश्च द्वयोरपि।

निगमो निर्णयश्चेति व्याख्येयं नैगमे पदे।।

यह बात निरुक्त के सभी काण्डों में पठित तथा प्रासंगिक रूप से आए परोक्षवृत्ति और अतिपरोक्षवृत्ति शब्दों पर समान रूप से लागू होती है। प्रत्यक्षवृत्ति शब्दों का अर्थ तो स्वतः निश्चित होता है, अतः उनकी व्याख्या इतने ऊहापोह से करने की आवश्यकता ही नहीं है।

यास्क ने निर्वाचन दो प्रकार के किए हैं-

(क) शब्द-निर्वचन : इस श्रेणी के अन्तर्गत वे निर्वचन आते हैं, जिनमें उन्होंने उन शब्दों की प्रकृति तथा उनमें होने वाले विकार (प्रादेशिक गुण) को वर्णसाम्य की दृष्टि से ध्यान में रखा है। जैसे कीकटा म्लेच्छभाषी लोगों का शब्द है। यास्क ने इस शब्द के वर्णों का साम्य भाषा के किं=की, कटा= कृताः से जोड़ा है। इस प्रकार के निर्वचन के अन्य उदाहरण हैं : सहस्र सहस्, विंशतिः द्विर्दश, अश्व अश्, पुत्र-पुत्+त्र, असुर-असु + र इत्यादि। निरुक्त में इस प्रकार के निर्वचन पर्याप्त हैं। भाषाविज्ञान की दृष्टि से इस प्रकार के निर्वचनों का महत्त्व ही सर्वाधिक होता है।

(ख) अर्थ-निर्वचन- इस श्रेणी में वे निर्वचन आते हैं, जो शब्दों के वर्णसाम्य को दृष्टि में न रखकर, केवल अर्थसाम्य के आधार पर किये गए हैं। इनमें प्रकृति तथा उसमें होने वाला (प्रादेशिक) विकार नहीं बतलाया जाता। पुत्र- पुरु+ त्र, कीकट- किं क्रियाभिः, समुद्र समभिद्रवन्त्येनमापः, पराशर (इन्द्रः) परा शातयिता यातूनाम् इत्यादि। इस प्रकार के निर्वचन भी निरुक्त में बहुत किए गए हैं।

शब्द का एक अपना प्रातिस्विक वाच्यार्थ तो होता ही है (अतः निर्वचन में भी उसी अर्थ को स्फोटित किया जाता है), किन्तु बहुधा शब्द अपने वाच्य से भिन्न अर्थ में भी प्रयुक्त होता है। आचार्य यास्क शब्दों के इस प्रकार के प्रयोग से पूर्णतया परिचित हैं। शब्द के निर्वचन के प्रसंग में प्रधान अर्थ को बतला कर वे उसके ताद्धित (गौण) अर्थ को दृष्टि रखना भी उचित समझते हैं। गो शब्द निघण्टु में पृथिवी के पर्यायों में आया है। लोक तथा वेद में ही इसका पशुविशेष (गाय तथा बैल) अर्थ भी होता है। यास्क ने वह भी बताया है। स्पष्ट ही यह इस शब्द का लाक्षणिक प्रयोग है। किन्तु यास्क इस अर्थ में गो शब्द का अलग से एक निर्वचन देते हैं : गमयतीषूनिति, अर्थात् वह डोरी गो इसलिए कहलाती है, क्योंकि वह बाणों को आगे फेंकती है।

निर्वचनों के प्रसंग में यास्क ने शब्द के सामाजिक, सांस्कृतिक, दार्शनिक तथा लोक-मनोविज्ञान के विशेष परिवेश को भी दृष्टि में रखा है। निरुक्त में गर्तारुकू की व्याख्या उन्होंने दक्षिण

भारत की एक प्रथा के विशेष परिवेश में की है। पुरुष (अर्थात् पुरुष) शब्द के दो निर्वचन उसके दो दार्शनिक अर्थों को प्रकट करते हैं, यह बात यास्क ने स्पष्ट कही है। सिंह, व्याघ्र, खग, काक आदि शब्दों को लोग इनके वाच्यार्थ से भिन्न अर्थों में अच्छी या बुरी दृष्टि से प्रयोग में लाते हैं। यास्क ने इन शब्दों के इस आलंकारिक प्रयोग को भलीभाँति समझाया है। इससे यास्क वस्तुतः कहना यह चाहते हैं कि निर्वचन में केवल भाषा-शास्त्र ही नहीं, अपितु अन्य बहुत-सी बातें भी सिमट आती हैं। नैरुक्त को इन सबसे परिचित होना चाहिए।

इस प्रकार हम देखते हैं कि यास्क ने अपने निर्वचनों में बहुत व्यापक दृष्टि रखी है। इसमें हमें एक साथ ध्वनि-विज्ञान, अर्थ-विज्ञान, मनोविज्ञान, अलंकार-शास्त्र और समाज-शास्त्र को समुचित महत्त्व देकर शब्दों के निर्वचन किये मिलते हैं।